तपागच्छीय तिथिप्रणालिका

एकतिथि पक्ष

■ विजयनन्दनसूरि

नमो नमः श्री गुरुनेमिसूरये ।।

उपक्रम

सर्वदा प्रत्येक कर्मकांड में प्रति स्थळ तिथि की प्रधानता रहती है । तिथि के बारे में घडी-पळ के साथ और घंटे-मिनिट के साथ प्रति वर्ष पंचांग में दी जाती है । किन्तु आराधना में तिथि किस प्रकार से मनायी जाती है? उसके लिये "उदयंमि जा तिहीo"-"क्षये पूर्वाo"-"वृद्धौ उत्तराo"-"यां तिथिं समनुप्राप्यo" आदि विधि-नियम वचन के अनुसार चली आती परंपरा यथार्थ स्वरूप से समझमें आ शकती है । परंपरा भी एक आगम अर्थात् मान्य शास्त्र स्वरूप ही है और वह शास्त्र-सापेक्षभाव के अनुसारअविच्छिन्न रूप से चली आती है ।

आराधना में तिथि की यथार्थ समझ के लिये यह "तपागच्छीय तिथिप्रणालिका" लिखी गयी है और वह स्वपरकल्याण के उद्देश के साथ लिखी गयी है ।

इस "तपागच्छीय तिथिप्रणालिका" का संशोधन-संपादन पंन्यास श्री सूर्योदयविजय गणि ने किया है ।

विजयनन्दनसूरि

शरण्य ! पुण्ये तव शासनेपि, संदेग्धि यो विप्रतिपद्यते वा ।

स्वादौ स तथ्ये स्वहिते च पथ्ये, संदेग्धि यो विप्रतिपद्यते वा ।।

सुनिश्चितं मत्सरिणो जनस्य, न नाथ! मुद्रामतिशेरते ते ।

माध्यस्थ्यमास्थाय परीक्षका ये, मणो च काचे च समानुबन्धाः ।।

यदीय सम्यक्त्वबलात् प्रतीमो, भवादृशानां परमस्वभावम् ।

कुवासनापाशविनाशनाय, नमोस्तु तस्मै तव शासनाय ।।

अस्मादृशां प्रमादग्रस्तानां, चरणकरणहीनानाम् ।

अब्धौ पोत इवेह, प्रवचनरागः शुभोपायः ।।

वीतराग ! सपर्यातस्तवाज्ञापालनं परम् ।

आज्ञाराद्धा विराद्धा च, शिवाय च भवाय च ।।

तिथिः शरीरं तिथिरेव कारणम्।।

तिथिः प्रमाणं तिथिरेव साधनम् ।।

ऑं ह्रीं अर्हं नमः ।।

श्री स्तंभनपार्श्वनाथाय नमः ।।

अनन्तलब्धिनिधानाय श्री गौतमस्वामिने नमः ।।

नमो नमः श्री गुरुनेमिसूरये ।।

श्रीजैन श्वेताम्बर मूर्तिपूजक तपागच्छीयचतुर्विध श्री श्रमणसंघनी शास्त्र अने श्री विजयदेवसूरीय सुविहित परंपरा अनुसार अविच्छिन्न चली आती

तिथिविषयक एकतिथि पक्ष की शुद्ध प्रणालिका

12 पर्वतिथि की क्षय-वृद्धि हो ही शकती नहीं है ।

लौकिक पंचांग में पर्व और अपर्व दोनों प्रकार की तिथिओं की क्षय-वृद्धि की जाती है किन्तु प्राचीन जैन परंपरा में पर्वतिथि की क्षय-वृद्धि नहीं होती है । किन्तु जब लौकिक पंचांग में पर्वतिथि की क्षय-वृद्धि हो तब आराधना में अपर्वतिथि की क्षय-वृद्धि की जाती है । साथ साथ पर्वतिथि और अपर्वतिथि दोनों को एक ही दिन में बोली नहीं जाती है और लिखी भी नहीं जाती है । और दो पर्वतिथि भी एक ही दिन में नहीं की जाती है । उसकी जगह अपर्वतिथि की क्षय-वृद्धि की जाती है ।

मुख्य पर्वतिथि बारह है । शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष की बीज, पंचमी, अष्टमी, एकादशी, चतुर्दशी, और पूर्णिमा व अमावास्या । लौकिक पंचांग में इन पर्वतिथि की क्षय-वृद्धि हो तब आराधना में अपर्वतिथि की क्षय-वृद्धि की जाती है।

कल्याणक-तिथि नित्य पर्वतिथि नहीं है ।

कल्याणक-तिथिओं को पर्वतिथि के रूपमें बतायी है तथापि वह बारह पर्वतिथि के प्रकार की नहीं है । क्योंकि लौकिक पंचांग में कल्याणक-तिथि की क्षय-वृद्धि होने पर भी आराधना में वही क्षय-वृद्धि कायम रहती है । उसकी बदली में श्री विजयदेवसूरीय परंपरा में अन्य तिथि की क्षय-वृद्धि आज दिन तक की गयी नहीं है । और वह परंपरा उचित भी है । क्योंकि बारह पर्वतिथि **नित्य पर्वतिथि** है और कल्याणक-तिथि आदि **नैमितिक पर्वतिथि** है । और इन दोनों में यही अंतर वास्तविक है । अत एव बारह पर्वतिथि की क्षय-वृद्धि में अन्य अपर्वतिथि की क्षय-वृद्धि की जाती है किन्तु कल्याणक-तिथि की क्षय-वृद्धि में निश्चय ही अन्य तिथि की क्षय-वृद्धि की जाती नहीं है ।

12 पर्वतिथि में अपवाद वचन का स्थान नित्य ही रहता है ।

हालांकि "क्षये पूर्वा०"-"वृद्धौ उत्तरा०"वचन का स्थान-अवकाश नित्य पर्वतिथि स्वरूप बारह पर्वतिथि में निश्चय ही पूर्णतः है और बाकी अपर्वतिथि व नैमितिक पर्वतिथि स्वरूप कल्याणक-तिथि आदि में यथासंभव विभाषापूर्वक अवकाश है ।

क्वचित्प्रवृत्तिः क्वचिदप्रवृत्तिः, क्वचिद्विभाषा क्वचिदन्यदेव ।
विधेर्विधानं बहुधा समीक्ष्य, चतुर्विधं बाहुलकं वदन्ति ।।

इस प्रकार की व्यवस्था प्राचीन काल से चली आती है । अत एव तिथि और तिथि की आराधना में कोई गरबडी नहीं होती है ।

पर्व-अपर्वतिथि के क्षय होने पर एक तिथि पक्ष की तिथि की और आराधना की शुद्ध प्रणालिका

लौकिक पंचांग में 1 (प्रतिपदा) का क्षय हो तब आराधना में भी 1 (प्रतिपदा) का क्षय किया जाता है । और 1 (प्रतिपदा) की आराधना बीज के दिन की जाती है । बेसता वर्ष या बेसता महिना भी बीज के दिन ही गिना जाता है और उसी निमित्त से स्नात्र आदि भी बीज के दिन ही किया जाता है किन्तु पूर्णिमा-प्रतिपदा, अमावास्या-प्रतिपदा इकट्ठे किये जाते नहीं है और प्रतिपदा का कार्य पूर्णिमा या अमावास्या के दिन किया जाता नहीं है ।

2 (बीज) के क्षय होने पर प्रतिपदा का क्षय किया जाता है । और 1 और 2 दोनों की आराधना बीज के दिन की जाती है किन्तु 1-2 इकट्ठे किये जाते नहीं है ।

3 (तृतीया) का क्षय होने पर त्रीज का क्षय किया जाता है । 3-4 एक साथ बोले जाते है और एक साथ गिने जाते है । त्रीज की आराधना बीज के दिन नहीं की जाती किन्तु 3-4 एक साथ मानकर बीज के बाद आये हुये दिन अर्थात् चतुर्थी के दिन की जाती है । त्रीज की सालगिराह भी बीज के दूसरे दिन मनायी जाती है । वैसे अक्षय तृतीया का क्षय होने पर, वैशाख शुक्ल-2 के बाद ही 3-4 साथ में मानकर उसी दिन वर्षीतप के पारणा किया जाता है । किन्तु वैशाख शुक्ल-3 का क्षय होने पर वैशाख शुक्ल-2 के दिन वर्षीतप का पारणा नहीं का जाता है । इस प्रकार 2-3 इकट्ठे नहीं के जाते है । क्योंकि ऐसा करने पर वर्षीतप की आराधाना में एक दिन कम होता है ।

4 (चतुर्थी) का क्षय होने पर चतुर्थी का क्षय किया जाता है । और 3-4 साथ में बोले जाते है और मनाये जाते है । 3-4 दोनों तिथि की आराधना तृतीया के दिन ही की जाती है ।

5 (पंचमी) का क्षय होने पर चतुर्थी का क्षय किया जाता है । और 3-4 साथ में मानकर 3-4 दोनों तिथि की आराधना एक ही दिन में की जाती है किन्तु 4-5 इकट्ठे नहीं किये जाते है ।

6 (छट्ठ) के क्षय होने पर 6 का क्षय किया जाता है । छट्ठ की आराधना पंचमी और छट्ठ एक साथ मानकर पंचमी के दिन नहीं की जाती है । किन्तु छट्ठ

और सप्तमी एक साथ जोड कर सप्तमी के दिन की जाती है । अषाड शुक्ल-6 का क्षय होने पर श्री महावीरस्वामी का च्यवन कल्याणक भी पंचमी के बाद सप्तमी के दिन छठ्ठ और सप्तमी साथ मानकर मनाया जाता है। च्यवन कल्याणक का जुलुस भी उसी दिन निकाला जाता है । क्योंकि पंचमी के बाद ही प्रभु का च्यवन हुआ था । ठीक उसी प्रकार वैशाख शुक्ल-6, वैशाख कृष्ण-6 और श्रावण शुक्ल-6 आदि का क्षय हो तब पंचमी के बाद आनेवाली सप्तमी के दिन छठ्ठ और सप्तमी एक साथ मानकर उसी दिन छठ्ठ संबंधित सालगिराह मनायी जाती है ।

7 (सप्तमी) का क्षय होने पर सप्तमी का क्षय किया जाता है और सप्तमी की आराधना छठ्ठ - सप्तमी को जोड कर उसी छठ्ठ के दिन की जाती है ।

8 (अष्टमी) का क्षय होने पर सप्तमी का क्षय किया जाता है । और छठ्ठ-सप्तमी दोनों को जोडकर छठ्ठ के दिन ही छठ्ठ और सप्तमी दोनों तिथि की आरधना की जाती है । पंचांग में बतायी गयी सप्तमी के दिन अष्टमी की आराधना की जाती है किन्तु सप्तमी औऱ अष्टमी इकट्ठी नहीं की जाती है ।

9 (नवमी) का क्षय होने पर 9 का क्षय किया जाता है । 9 की आऱाधना 8-9 को जोडकर अष्टमी के दिन नहीं की जाती है किन्तु 10 के दिन 9-10 जोडकर की जाती है ।

10 (दशमी) का क्षय होने पर 10 का क्षय किया जाता है और 9 के दिन 9-10 जोडकर 9-10 की आराधना 9 के दिन ही की जाती है । अर्थात् श्रीपार्श्वनाथ प्रभु का जन्मकल्याणक 9-10 को जोडकर 9 के दिन ही किया जाता है । 10-11 जोडकर 11 के दिन पोष दशमी की आराधना नहीं की जाती है, ठीक उसी प्रकार 10 की सालगिराह भी (भोयणी आदि तीर्थ की) 9 के दिन ही 9-10 जोडकर मनायी जाती है ।

11 (एकादशी) का क्षय हो तब 10 का क्षय किया जाता है ।श्रीपार्श्वनाथ प्रभु का जन्मकल्याणक 9-10 को जोडकर 9 के दिन ही किया जाता है । 10-11 जोडकर 11 के दिन पोष दशमी की आराधना नहीं की जाती है, और उपर बताया उसी प्रकार उनके अगले दिन अर्थात् 9 के दिन 9-10 दोनों तिथिओं की आराधना की जाती है ।

12 (द्वादशी) का क्षय़ होने पर 12 का क्षय किया जाता है । और 12 की आराधना 11-12 जोडकर 11 दिन नहीं की जाती है । किन्तु 13 के दिन 12-13 जोडकर 13 के दिन की जाती है ।

13 (त्रयोदशी) का क्षय होने पर 13 का क्षय किया जाता है और12 के दिन 12-13 जोडकर दोनों तिथि की आराधना 12 के दिन की जाती है ।

14 (चतुर्दशी) का क्षय होने पर 13 का क्षय किया जाता है । और 12 के दिन 12-13 जोडकर 12-13 दोनों तिथि की आराधना 12 के दिन ही की जाती है किन्तु 13-14 इकट्ठा करके 14 के दिन 13 की आराधनानहीं की जाती है । अत एव चैत्र शुक्ल-14 के क्षय होने पर श्री महावीर जन्मकल्याणक 13-14 साथ मानकर 14 के दिन मनाया जाता नहीं है । किन्तु 13 का क्षय करके 12-13 जोडकर 12 के दिन मनाया जाता है । 13 की सालगिराह हो वहाँ भी 14 के क्षय होने पर उपर बताया उसी प्रकार से हर वक्त 12-13 जोडकर 12 के दिन ही मनाया जाता है ।

पूर्णिमा या अमावास्या का क्षय होने पर 13 का ही क्षय होता है ।

15 (पूर्णिमा) या 30 (अमावास्या) का क्षय होने पर भी 13 का ही क्षय किया जाता है और 12 के दिन 12-13 जोडकर दोनों तिथि की आराधना की जाती है, और पंचांग की 13 के दिन 13 होने पर भी 14 की जाती है और पंचांग की 14 के दिन 14 होने पर भी पूर्णिमा या अमावास्या की जाती है किन्तु 14-15 या 14-30 जुडा जाता नहीं है । और इस प्रकार चतुर्दशी-पूर्णिमा व चतुर्दशी-अमावास्या स्वरूप संयुक्त पर्व की आराधना निराबाध हो शकती है । साथ साथ चतुर्दशी-पूर्णिमा व चतुर्दशी-अमावास्या के छठ्ठ तप की आराधना भी हो शकती है।

पंचांग की तेरश औदयिकी चतुर्दशी होती है और चतुर्दशी औदयिकी पूर्णिमा या अमावास्या होती है ।

पूर्णिमा-अमावास्या का क्षय होने पर पंचांग में चतुर्दशी होने पर भी त्रयोदशी के दिन चतुर्दशी की जाती है । चतुर्दशी के दिन पूर्णिमा या अमावास्या की जाती है । वह “क्षये पूर्वा०” वचन के आधार पर ही की जाती है । अर्थात् “क्षये पूर्वा०” वचन के आधार पर ही पंचांग की तेरश औदयिकी चतुर्दशी होती है और पंचांग की चतुर्दशी औदयिकी पूर्णिमा या अमावास्या होती है । अत एव पूर्व के महान पुरुष आराधना में इस प्रकार की प्रणालिका अविच्छिन्न रूप से मान्य करते रहे हैं ।

पर्व-अपर्वतिथि की वृद्धि हो तब तिथि और तिथि की आराधना की एकतिथि पक्ष की शुद्ध प्रणालिका

लौकिक पंचांग में 1 (प्रतिपदा) की वृद्धि होने परअर्थात् प्रतिप्रदा दो होने पर प्रतिपदा की आराधना दूसरी प्रतिपदा के दिन की जाती है । बेसतुं वर्ष या बेसता महिनाप्रथम प्रतिपदा के दिन मनाया जाता है और उसी निमित्त का स्नात्र आदि भी प्रथम प्रतिपदा के दिन किया जाता है ।

2 (बीज) की वृद्धि होने पर 1 दो की जाती है किन्तु दो बीज नहीं की जाती है । पंचाग की पहली बीज के दिन 1 औदयिकी नहीं होने पर भी, उसी दिन दूसरी एकम की जाती है और वह औदयिकी 1 गिनी जाती है । अत एव दूसरी एकम के दिन एकम की आराधना की जाती है । किन्तु बेसता वर्ष या बेसता महिना यहाँ भी पहली एकम के दिन किया जाता है ।

3 (तृतीया) की वृद्धि होने पर दो तृतीया की जाती है और तृतीया की आराधना दूसरी तृतीया के दिन की जाती है ।

4 (चतुर्थी) की वृद्धि होने पर चतुर्थी की वृद्धि की जाती है ।

5 (पंचमी) की वृद्धि होने पर दो चतुर्थी की जाती है और चतुर्थी की आराधना पहली पंचमी के दिन दूसरी चतुर्थी मानकर की जाती है किन्तु दो पंचमी नहीं की जाती है । इस प्रकार लौकिक पंचांग में भाद्रपद शुक्ल पंचमी दो होने पर भी आराधना में शास्त्रानुसारी अहमदाबाद डहेळा के उपाश्रय की प्रणालिका अनुसार दो चतुर्थी की जाती है और दूसरी चतुर्थी अर्थात् पंचांग की पहली पंचमी को दूसरी चतुर्थी मानकर उसी दिन संवत्सरी महापर्व की आराधना की जाती है । दो तृतीया और दो पंचमी भी नहीं की जाती है ।

6 (छट्ठ) की वृद्धि होने पर दो छट्ठ की जाती है और छट्ठ की आराधना दूसरी छट्ठ के दिन की जाती है ।

7 (सप्तमी) की वृद्धि होने पर दो सप्तमी की जाती है और सप्तमी की आराधना दूसरी सप्तमी के दिन की जाती है ।

8 (अष्टमी) की वृद्धि होने पर दो सप्तमी की जाती है और सप्तमी की आराधना पंचांग की पहली अष्टमी को दूसरी सप्तमी मानकर की जाती है किन्तु अष्टमी दो नहीं की जाती है ।

9 (नवमी) की वृद्धि होने पर दो नवमी की जाती है और नवमी की आराधना दूसरी नवमी के दिन की जाती है ।

10 (दशम) की वृद्धि होने पर दो दशम की जाती है और दशम की आराधना दूसरी दशम के दिन की जाती है ।

11 (एकादशी) की वृद्धि होने पर दो दशम करके दूसरी दशम के दिन ही पोष दशम की आराधना की जाती है ।

11 (एकादशी) की वृद्धि होने पर दो दशम की जाती है किन्तु दो एकादशी नहीं की जाती है, दशम की आराधना पंचांग की पहली एकादशी को दूसरी दशम मानकर उसी दिन ही दशम की आराधना की जाती है । पंचांग में यदि वैशाख शुक्ल एकादशी की वृद्धि होने पर श्री महावीरस्वामी के केवळज्ञान कल्याणक की आराधना पंचांग की पहली एकादशी को दूसरी दशम मानकर उसी दिन की जाती है । ठीक उसी तरह माघ शुक्ल-11 दो हो तो भी पंचांग की औदयिकी 10 के दिन सालगिराह मनायी जाती नहीं है किन्तु पंचांग की पहली 11 को दूसरी 10

मानकर उसी दिन ही मनायी जाती है, इस प्रकार पहली एकादशी ही औदयिकी दूसरी दशम बनती है ।

12 (द्वादशी) की वृद्धि हो तो दो 12 की जाती है और दूसरी 12 के दिन आराधना की जाती है ।

13 (त्रयोदशी) की वृद्धि हो तो 13 दो की जाती है और 13 की आराधना दूसरी 13 को की जाती है ।

चैत्र शुक्ल 14 (चतुर्दशी) की वृद्धि हो तो दो त्रयोदशी करके दूसरी त्रयोदशी के दिन ही जन्मकल्याणक मनाया जाता है ।

14 (चतुर्दशी) की वृद्धि हो तो दो त्रयोदशी की जाती है और पंचांग की पहली चतुर्दशी को दूसरी त्रयोदशी करके 13 की आराधना की जाती है । 13 की सालगिराह भी उसी दिन मनायी जाती है । अत एव पंचांग में चतुर्दशी दो हो तो श्री महावीर जन्मकल्याणक की आराधना भी पंचांग की पहली चतुर्दशी को दूसरी 13 करके की जाती है । कल्याणक का जुलुस भी उसी दूसरी 13 के दिन नीकाला जाता है किन्तु दो चतुर्दशी नहीं की जाती है । वैसे पंचांग में दो चतुर्दशी हो तो त्रयोदशी की आराधना, कल्याणक व कल्याणक का जुलुस पंचांग की त्रयोदशी के दिन नहीं किया जाता है किन्तु पंचांग की पहली चतुर्दशी आराधना में औदयिकी 13 बनती है और इसी दिन ही 13 संबंधित सर्व कार्य किया जाता है ।

पूर्णिमा-अमावास्या की वृद्धि में भी 13 की ही वृद्धि की जाती है ।पूर्णिमा या अमावास्या की वृद्धि में भी दो त्रयोदशी की जाती है। पंचांग की पहली पूर्णिमा या अमावास्या को चतुर्दशी की जाती है और पंचांग की दूसरी पूर्णिमा या अमावास्या को ही पूर्णिमा या अमावास्या की जाती है । इस तरह 13 की कल्याणक की आराधना पंचांग की चतुर्दशी को ही दूसरी त्रयोदशी मानकर की जाती है और चतुर्दशी की आराधना (पौषध, पक्खी, चातुर्मासिक प्रतिक्रमण आदि) पंचांग की पहली पूर्णिमा या पहली अमावास्या के दिन चतुर्दशी करके उसे औदयिकी चतुर्दशी मानकर उसी दिन की जाती है और पूर्णिमा या अमावास्या की आराधना पंचांग की दूसरी पूर्णिमा या अमावास्या के दिन की जाती है ।

भाद्रपद शुक्ल-5 (पंचमी) की वृद्धि में दो चतुर्थी करने में ही आराध्य पंचमी से संवत्सरी का अनंतर चतुर्थीत्व तथा अव्यवहितपूर्ववर्तित्व सही मायने में होता है ।

इस प्रकार भाद्रपद शुक्ल-5 (पंचमी) की वृद्धि अर्थात् पंचमी दो हो तो आराधना में पंचांग की पहली पंचमी को चतुर्थी करके उसे औदयिकी दूसरी चतुर्थी मानकर उसी दिन ही श्रीसंवत्सरी महापर्व की आराधना की जाती है किन्तु पंचमी दो नहीं की जाती है । इस प्रकार करने से संवत्सरी महापर्व का आराध्य पंचमी दिन से अव्यवहितपूर्ववर्तित्व और अनन्तरचतुर्थीत्व यथार्थ रूप से प्राप्त होता है और आराधना भी होती है । अत एव पंचांग में भाद्रपद शुक्ल पंचमी दो हो तो अर्थात् वि. सं. 1992 में भाद्रपद शुक्ल दूसरी चतुर्थी के दिन रविवार की संवत्सरी की तरह तथा वि. सं. 1993 में भाद्रपद शुक्ल दूसरी चतुर्थी दिन गुरुवार की संवत्सरी की तरह आराध्य पंचमी का दिन जो पंचांग में दूसरी पंचमी का दिन है, उसके अव्यवहितपूर्ववर्ति पहली पंचमी के दिन दूसरी चतुर्थी करके संवत्सरी महापर्व की आराधना करना उचित है और इसमें ही "अन्तरा विय से कप्पइo" इसी सर्वमान्य आगमवचन का तात्पर्य और प्रामाण्य निहित है ।

साथ साथ भाद्रपद शुक्ल पंचमी का पंचांग में क्षय होने पर अन्य पंचांग के आधार पर भाद्रपद शुक्ल षष्ठी का क्षय मानकर भाद्रपद शुक्ल पंचमी को अखंड रखकर चतुर्थी के दिन संवत्सरी महापर्व की आराधना की जाती है । किन्तु पंचमी का क्षय नहीं किया जाता है तथा चतुर्थी और पंचमी इकट्ठे नहीं किये जाते है, तथा तृतीया का क्षय नहीं किया जाता है । इस प्रकार की तिथि की शुद्ध प्रणालिका शास्त्र व विजयदेवसूरीय परंपरानुसार आज तक चली आती है ।

इस प्रणालिका के अनुसार संवत्सरी की आराधना करने से श्री कालिकाचार्य भगवंते पंचमी के रक्षणार्थ चतुर्थी का प्रवर्तन किया था उसकी अपेक्षा से पंचमी का रक्षण भी होता है । तथा संवत्सरी महापर्व का तथा आगामी बेसता वर्ष का समान वार मिल जाता है । अत एव सेंकडो वर्ष से जिस वार की संवत्सरी हो उसी वार का नया बेसता वर्ष आता है, वह भी प्राप्त होता है ।

तिथि प्ररूपणा की प्राचीन मर्यादा डहेला के तथा लवार की पोळ के उपाश्रय की है । इस प्रकार समग्र हिन्दुस्तान का श्वेताम्बर मूर्तिपूजक तपागच्छ संघ करता आ रहा है ।

तिथि-प्ररूपणा की प्रणालिका अहमदाबाद परम पूज्य पंन्यास श्री रूपविजयजी गणिवरना डहेळाना उपाश्रय की और लवार की पोळ के उपाश्रय की होने से दोनों उपाश्रय की तिथि का और संवत्सरी का जो निर्णय होता है वह समग्र अहमदाबाद के तपागच्छ के सभी उपाश्रयवाले मान्य करते थे और मान्य कर रहे है । वही निर्णय अहमादाबाद का संपूर्ण तपागच्छीय संघ मान्य करते थे और मान्य रखते है, वही निर्णय हिन्दुस्तान का सकल तपागच्छीय संघ को मान्य होने की परंपरा है । अत एव हिन्दुस्तान के सभी गाँव, शहर के सभी तपागच्छ संघ में तिथि की व संवत्सरी महापर्व की एक समान आऱाधना चली आती है । आज तक इस प्रकार की प्रणालिका चली आती है । हमारे पूज्य वडील तथा हम भी डहेळा के उपाश्रय की तथा लवार के उपाश्रय की प्रणालिका अनुसार संवत्सरी महापर्व की तथा तिथि की आऱाधना करते थे और करते रहेंगे । आज तक डहेळा के उपाश्रय की तथा लवार की पोळ के उपाश्रय की आराधना से भिन्न आराधना नहीं की है । उसी प्रकार डहेळा के उपाश्रय की तथा लवार की पोळ के उपाश्रय की प्रणालिका अनुसार आराधना करेंगे ।

वि. सं. 1952 आदि में भाद्रपद शुक्ल पंचमी के क्षय होने पर छट्ठ का क्षय सकल श्रीतपागच्छ संघने किया था ।

वि. सं. 1952 में, वि. सं. 1961 में, वि. सं. 1989 में और वि. सं. 2004 में पंचांग में भाद्रपद शुक्ल पंचमी के क्षय होने पर अन्य पंचांग के आधार पर भाद्रपद शुक्ल छट्ठ का क्षय करके, भाद्रपद शुक्ल पंचमी को अखंड रखकर भाद्रपद शुक्ल चतुर्थी को संवत्सरी महापर्व की आराधना सकल श्री तपागच्छ संघ ने की थी । और वह उचित किया था ।

बाद में वि. सं. 2013 व 14 में पंचांग में भाद्रपद शुक्ल पंचमी का क्षय था, किन्तु उसी वख्त वि. सं. 1952, 1961, 1989 आदि की तरह छट्ठ के क्षयवाले अन्य पंचांग का आधार नहीं लेकर किन्तु वर्तमान पंचांग मान्य करके "क्षये पूर्वा०" वचन के अनुसार भाद्रपद शुक्ल चतुर्थी के दिन पंचमी करके, भाद्रपद शुक्ल पंचमी अखंड रखकर वही आराधना पंचमी के अव्यवहितपूर्व के दिन संवत्सरी महापर्व की आराधना करनी । ऐसा निर्णय डहेळा के उपाश्रय तथा लवार की पोळ के उपाश्रय के संघ ने किया । उसी प्रकार आराधना करने का जाहिर हुआ । और उसी प्रकार समग्र तपागच्छ संघ ने आराधना की, हमने भी उसी प्रकार आराधना की ।

यद्यपि इन दोनों उपाश्रय के संघ में भी मतवैभिन्य था ।

यद्यपि डहेळा के उपाश्रय और लवार की पोळ के उपाश्रय के संघ में दो भिन्न विचार थे ।

(1) भाद्रपद शुक्ल पंचमी के क्षय पर चतुर्थी का क्षय मानना और तृतीया के दिन तृतीया और चतुर्थी एक साथ मानकर भाद्रपद शुक्ल चतुर्थी की संवत्सरी करना, तथा भाद्रपद शुक्ल पंचमी दो हो तो भाद्रपद शुक्ल चतुर्थी दो करना । यह विचार आचार्य श्री विजयहर्षसूरिजी के थे ।

(2) जब कि आचार्य श्रीविजयसुरेन्द्रसूरिजी (डहेळावाले) की मान्यता भाद्रपद शुक्ल पंचमी के क्षय होने पर चतुर्थी का क्षय न करके तृतीया का क्षय करने की थी औऱ भाद्रपद शुक्ल पंचमी दो होने पर दो तृतीया करने की थी ।

किन्तु भाद्रपद शुक्ल पंचमी का क्षय नहीं करना, पंचमी को अखंड रखना और भाद्रपद शुक्ल पंचमी दो नहीं करना । आराध्य पंचमी के अव्यवहितपूर्व दिन पर संवत्सरी महापर्व की आराधना करनी । इस विचार पर तो दोनों संमत थे ।

वही तिथि के प्रामाण्य में उसी तिथि का औदयिकत्व ही कारण है ।

तिथि के प्रामाण्य में तिथि का भुक्त काल या तिथि की समाप्ति प्रायोजक नहीं है किन्तु "उदयंमि जा तिहि सा पमाणं०" इस सर्वमान्य वचन के अनुसार उसी तिथि का औदयिकत्व ही उस में प्रायोजक है । उसमें कोइ मतवैभिन्य नहीं है ।

पंचांग की क्षीण अष्टमी भी"क्षये पूर्वा०" वचन के अनुसार सप्तमी के दिन औदयिकी अष्टमी बनती है ।

जब भी पंचांग मे पर्वतिथि का क्षय होता है अर्थात् उसका औदयिकत्व नहीं होता है तब आराधना में "क्षये पूर्वा०" वचन से पूर्व की जो तिथि है वह क्षीण तिथि के रूप में प्रमाणित होती है अर्थात् अष्टमी का क्षय होने पर"क्षये पूर्वा०" वचन से पूर्व की जो सप्तमी है वह अष्टमी तिथि के रूप में प्रमाणित होती है, इस प्रकार वह अष्टमी रूप में औदयिकी सिद्ध होती है अर्थात् वहाँ सप्तमी तिथि में जो औदयिकत्व है, उसकी निवृत्ति होती है अतः सप्तमी का क्षय किया जाता है और "क्षये पूर्वा०" वचन से अष्टमी में औदयिकत्व प्राप्त होता है ।

पंचांग में जब दो अष्टमी होती है तब पहली अष्टमी भी "वृद्धौ उत्तरा" वचन के अनुसार दूसरी औदयिकी सप्तमी बनती है ।

जब पंचांग में दो अष्टमी होती है तब "वृद्धौ उत्तरा०" वचन के अनुसार पहली अष्टमी में से अष्टमी के रूप में उसका औदयिकत्व निवृत्त होता है और पहली अष्टमी दूसरी सप्तमी बनती है और उसमें सप्तमी के रूप में औदयिकत्व प्राप्त होता है ।

चतुर्दशी होने पर भी त्रयोदशी के दिन चतुर्दशी करनेवाले तथा चतुर्दशी के दिन पूर्णिमा या अमावास्या करनेवाले आराधक ही है ।

चतुर्दशी-पूर्णिमा या चतुर्दशी-अमावास्या दोनों संयुक्त पर्वतिथि में जब पंचांग में पूर्णिमा या अमावास्या का क्षय होने पर आराधना में "क्षये पूर्वा०" वचन की आवृत्ति (दो बार प्रवृत्ति) करने से चतुर्दशी पूर्णिमा या अमावास्या बनती है और त्रयोदशी चतुर्दशी बनती है । और त्रयोदशी अनौदयिकी होने से उसका क्षय किया जाता है । अतः आराधना में चतुर्दशी होने पर भी त्रयोदशी के दिन चतुर्दशी करने से और ठीक उसी तरह चतुर्दशी के दिन पूर्णिमा या अमावास्या करने से और उसी प्रकार आराधना करने से परंपरावाले पूर्वोक्त सर्वमान्य शास्त्रवचन और श्रीविजयदेवसूरीय परंपरा अनुसार पूर्णतः आराधक ही है ।

"वृद्धौ कार्या०" वचन से पहली पूर्णिमा या अमावास्या के दिन चतुर्दशी और चतुर्दशी के दिन दूसरी त्रयोदशी की जाती है ।

पंचांग में पूर्णिमा या अमावास्या की वृद्धि अर्थात् दो हो तो आराधना में "वृद्धौ कार्या तथोत्तरा " वचन की आवृत्ति (दो बार प्रवृत्ति) करने से पहली पूर्णिमा या अमावास्या चतुर्दशी बनती है और वह औदयिकी सिद्ध होती है । तथा पंचांग की जो चतुर्दशी है वह औदयिकी दूसरी त्रयोदशी बनती है । इस प्रकार दो पूर्णिमा या अमावास्या की जगह दो त्रयोदशी की जाती है । इस प्रकार चतुर्दशी का अंश मात्र भी भुक्त काल न होने पर भी "वृद्धौ कार्या तथोत्तरा " नियम से पहली पूर्णिमा या अमावास्या को चतुर्दशी करके उसी प्रकार आराधना करने से परंपरावाले पूर्वोक्त शास्त्रवचन अनुसार पूर्णतः आराधक ही है ।

पंचांग में चतुर्दशी होने पर भी त्रयोदशी के दिन चतुर्दशी आदि करना तथा पंचांग में भाद्रपद शुक्ल पंचमी दो होने पर पहली भा. शु. पंचमी के दिन दूसरी चतुर्थी मानना या मनाना अनर्थ का कारण नहीं है किन्तु सम्यक्त्वशुद्धि का ही आलंबन या कारण है ।

उसका तात्पर्य यह है कि पंचांग में चतुर्दशी होने पर भी त्रयोदशी के दिन चतुर्दशी करना अथवा पहली पूर्णिमा या अमावास्या के दिन चतुर्दशी करना, साथ साथ भाद्रपद शुक्ल पंचमी दो होने पर पहली पंचमी के दिन दूसरी चतुर्थी (जिसमें संवत्सरी महापर्व की आराधना की जाती है) मानने में और मनाने में परंपरावाले किसी भी प्रकार की गलती नहीं करते है । और इस प्रकार मानना या मनाना तनिक भी अनर्थ का कारण नहीं है किन्तु निश्चय ही आराधना ही है और सम्यक्त्व अर्थात् शुद्ध श्रद्धा की निर्मळता का परम आलंबन या कारण है ।

वदतो व्याघात जैसा बोलनेवाले अनुकंपा अर्थात् दया करने लायक ही है ।

जो वर्ग श्रीविजयदेवसूरीय परंपरावाले तपागच्छीय सकळ श्री संघ से वि. सं. 1992 और 1993 में पर्वतिथि की क्षय-वृद्धि में अलग होकर तिथि की, पक्खी की और चातुर्मासिक की आराधना अलग की है । बाद में पिछले कुछ साल से अपनी तिथि कीभिन्न आचरणा व प्ररूपणा में पट्ट के रूप में थोडा सा परिवर्तन करके पूर्णिमा और अमावास्या की आराधना में परंपरावाले एकतिथि पक्ष के अनुसार आराधना करते हैं और करवाते हैं तथा पहली पूर्णिमा या पहली अमावास्या के दिन चतुर्दशी और पंचांग की चतुर्दशी के दिन दूसरी त्रयोदशी मानते हैं और मनाते हैं । जिस दिन लौकिक पंचांग में चतुर्दशी का भोग्य काल का नाम-निशान भी नहीं है उसी दिन चतुर्दशी तथा पंचांग में चतुर्दशी होने पर भी त्रयोदशी के दिन चतुर्दशी मानते हैं और मनाते भी हैं । इतना ही नहीं उसी वर्ग की तिथिपत्रिका अर्थात् पंचांग में भी जब लौकिक पंचांग में दो पूर्णिमा या दो अमावास्या हो तब दो त्रयोदशी लिखा जाता है और पूर्णिमा या अमावास्या क्षय होने पर त्रयोदशी का क्षय लिखा जाता है और इसी प्रकार वे परंपरावालों के साथ ही पूर्णिमा या अमावास्या की क्षय-वृद्धि में चतुर्दशी की, पक्खी की और चातुर्मासिकी की आराधना करते हैं ।

तथापि आज उसी वर्ग के लोग अपने लिये ही वदतो व्याघात जैसा “परंपरावाले महा अनर्थ कर रहे हैं और उनको अपने भलाई कि खातिर भी अपनी भूल सुधार लेने की आवश्यकता है।” ऐसा बोल रहे हैं और लिखवाते भी है । ऐसा वदतो व्याघात जैसा बोलकर वे लोग ही (यदि उनकी समझ में आये तो)कैसा महा अनर्थ कर रहे हैं ? कैसा महा अनर्थ का सेवन कर हैं ? कैसी भूल कर रहेहै ?

यदि उनको सही बात समझ में आये तो अपने ही भलाइ के मुताबिक अपनी गलती सुधार लेने के लिये अवश्य विचार करना चाहिये ।

वास्तव में वे लोग अनुकंपा पात्र है ऐसा कहने में कुछ भी अनुचित नहीं लगता है ।

आज्ञाऽऽराद्धा विराद्धा च, शिवाय च भवाय च ,

इस तिथि प्रणालिका किताब का लेखन हमने “तमेव सच्चं नीस्संकं, जं जिणेहिं पवेइयं” से वासनावासित अन्तःकरण से अपने क्षयोपशम के अनुसार अपनी समझ के अनुसार स्वपरकल्याणार्थे किया है । इसमें यदि प्रमाद के कारण श्रीवीतराग परमात्मा की आज्ञा से विपरीत लिखा गया हो तो उसके लिये त्रिविध त्रिविध से “मिच्छा मि दुक्कडं” देते हैं ।

हमारे इस लेखन में यदि किसी को भूल मालुम पड जावे तो खुशी से भूल निकाल सकते हैं । किन्तु हमारे लेखन का पूर्णतः श्रवण-मनन-निदिध्यासन करके, हमारे हृदय के तात्पर्य का यथार्थ अवगाहन करके निकाली हुयी भूल हमारे दिल को तनिक भी दुःख नहीं पहुंचायेगी । इस प्रकार सर्व वडील व मान्य महापुरुषों को अंजलिबद्ध हम बार बार विनयसहित निवेदन करते हैं ।

विजयनन्दनसूरि

शुभं भवतु चतुर्विधस्य श्रीश्रमणसंघस्य

।। नमो नमः श्री गुरुनेमिसूरये ।।

वि. सं. 2014 में अहमदाबाद में संम्मिलित तपागच्छीय मुनि संमेलन में वैशाख शुक्ल-चतुर्थी, बुधवार, ता. 23-4-1958 के दिन रखा गया जाहिर निवेदन -----

तिथिविषयक विचारभेद के बारे में - बारह पर्वतिथि, संवत्सरी महापर्व की आराधना का दिन, कल्याणक तिथिएँ और अन्य तिथिओं का समावेश होता है, उसमें ----

दो बीज, दो पंचमी, दो अष्टमी, दो एकादशी, पूर्णिमा और अमावास्या - इन बारह पर्वतिथि के बारे में जो प्रणालिका है कि - लौकिक पंचांग में जब भी इन पर्वतिथिओं की क्षय-वृद्धि होने पर आराधना में इन बारह पर्वतिथिओं में से किसी भी पर्वतिथि की क्षय-वृद्धि नहीं की जाती है किन्तु उसकी जगह अपर्वतिथि की क्षय-वृद्धि की जाती है । इस प्रकार से चली आती जो शास्त्रानुसारी शुद्ध प्रणालिका, जो पू. श्रीविजयदेवसूरिजी महाराज की परंपरा के नाम से प्रसिद्ध है इतना ही नहीं उसके पहले भी यही प्रणालिका थी, क्योंकि पू. श्री देवसूरिजी को पू. श्रीहीरसूरिजी महाराज की प्रणालिका से भिन्न प्रणालिका का प्रवर्तन करने का कोइ विशिष्ट कारण या प्रयोजन हो ऐसा मानने के लिये कोई सबूत नहीं है ।

इतना ही नहीं पू. श्रीहीरसूरिजी महाराज के काल में भी इस प्रकार की प्रणालिका मान्य थी और वही प्रणालिका पू. श्रीदेवसूरिजी महाराज ने अपनायी, जो अब तक अपनी पट्टपरंपरा में अविच्छिन्न रूप से चली आती है और जिस प्रणालिका का संविग्न विद्वान् गीतार्थमहापुरुषों ने आदर किया है और आचरण किया है, इसमें किसी भी प्रकार के तर्क या शंका या चर्चा का स्थान नहीं है ऐसा हम मानते हैं ।

अन्य किसी वर्ग की ऐसी मान्यता हो कि यह प्रणालिका यतिओं के गाढ अंधकारमय काल में असंविग्न-अगीतार्थ और परिग्रहधारी-शिथिलाचारी द्वारा चलायी गयी है तो वही मान्यता उसी वर्ग को भले ही मुबारक हो । यतिओं में भले ही शिथिलाचार और परिग्रह हो तथापि इतना तो निश्चित ही है कि वे वीतराग धर्म के प्रति पूर्णतः श्रद्धावान तो थे ही । उन लोगों को तिथि के बारे में गलत हेतु सह अशुद्ध प्ररूपणा करने का कोई कारण नहीं था । उन लोगों ने तो उसी कठिन काल में धर्म की रक्षा की थी ।

तथापि इतना निश्चित हे कि पूर्वोक्त बारह पर्वतिथि की क्षय-वृद्धि मत करना, उसकी बदली में अपर्वतिथि की क्षय-वृद्धि करने की आज तक चली आती अविच्छिन्न शुद्ध प्रणालिका सेंकडो साल से समग्र तपागच्छ संघ में अपने सर्व वडीलों ने अपनायी है, वह हमें मालुम है और पू. पंन्यास श्रीरूपविजयजी गणि महाराज की डहेळा के उपाश्रय की स्थापना से आज पर्यंत हम सब उसी प्रकार ही समग्र तपागच्छ संघ में आचरण करते हैं । भले ही कुछ लोगों के निश्चित वर्ग ने लौकिक पंचांग की पर्वतिथि की क्षय-वृद्धि होने पर आराधना में वही क्षय-वृद्धि कायम रखने की नयी प्रणालिका तपागच्छ के सभी आचार्यों की बिना संमति 22 साल से आचरण में रखी है किन्तु वि. सं. 1992 से पूर्व तो समग्र तपागच्छ में तथा उसी वर्ग में से भी किसी भी साधु-साध्वी या श्रावक-श्राविका ने पर्वतिथि की क्षय-वृद्धि नहीं की है । किन्तु पू. मणीविजयजी दादा, पू. श्री बुटेरायजी म., पू. श्री मूलचंदजी म. , पू. श्रीवृद्धिचंदजी म., पू. श्रीआत्मारामजी म., पू. पंन्यासजी श्रीप्रतापविजयजी गणि, पं. श्रीदयाविमळजी म., पं. श्री सौभाग्यविमळजी म., पं. श्रीगंभीरविजयजी गणि, दोनों कमळसूरिजी म., श्रीनीतिसूरिजी म., उपाध्याय श्री वीरविजयजी म., प्रवर्तक श्रीकान्तिविजयजी म., मुनि श्रीहंसविजयजी म., काशीवाले श्रीधर्मसूरिजी म., श्रीनेमिसूरिजी म., श्रीवल्लभसूरिजी म., श्रीदानसूरिजी म. तथा श्रीझवेरसागरजी म., श्रीसागरानंदसूरिजी म., तथा श्रीमोहनलालजी म., मुनिश्री कांति मुनिजी म., श्रीखांतिसूरिजी म. आदि तमाम अपने वडील पूज्य महापुरुषों ने वही प्रणालिका अर्थात् पर्वतिथि की क्षय-वृद्धि नहीं करने का आचरण किया हैं और आदर भी किया है । उपर्युक्त सर्व महापुरुष गीतार्थ थे, अगीतार्थ नहीं थे, महात्यागी थे किन्तु शिथिलाचारी नहीं थे, परिग्रहधारी नहीं थे किन्तु शुद्ध अपरिग्रही थे, तथा विद्वान् और समयज्ञ पुरुष थे। तथा वही काल भी अंधकारमय नहीं था । इतना ही नहीं वे सभी महापुरुष भवभीरु थे और शास्त्र के अनुसार ही प्रवृत्ति करनेवाले थे । उनको शास्त्र से विरुद्ध या परंपरा से विरुद्ध करने का कोई कारण नहीं था । और ऐसा मानना या बोलना भी हमारे लिये उन महापुरुषों की आशातना करना है ऐसा निश्चित हमारा मानना है ।

अतः हमारा अंतिम अभिप्राय और कथन यह है कि --- बारह पर्वतिथि की क्षय-वृद्धि नहीं करना । लौकिक पंचांग में जब भी बारह पर्वतिथि की क्षय-वृद्धि हो तब आराधना में उसकी बदली में अपर्वतिथि की क्षय-वृद्धि ही करने की जो प्रणालिका है उसमें हम तनिक भी परिवर्तन करना नहीं चाहते हैं । और अपने समग्र तपागच्छ में चतुर्विध संघ उसी प्रणालिका को एक समान रूप से मान्य रखें और पिछले कुछेक वर्ष से जिन्हों ने उससे भिन्न प्रणालिका अपनायी है उसका वे लोग हृदय की विशालता से त्याग करें । ऐसी तपागच्छीय चतुर्विध श्रीसंघ को मेरी नम्र विनंति है । तथा इस चर्चा के विषय में बारह पर्वतिथि की क्षय-वृद्धि नहीं करने की प्रणालिका का समावेश करना उचित नहीं है ऐसा हम मानते हैं । बाकी संवत्सरी महापर्व की आराधना के दिन के बारे में और अन्य कल्याणक-तिथि आदि की चर्चा करके निर्णय करने में हमारी संमति है । उपर्युक्त बारह पर्वतिथि के बारे में भी अत्र उपस्थित दोनों पक्ष में से जिनको भी परस्पर चर्चा या विचार करना हो, वे कर सकते हैं । इतना ही नहीं उन लोगों के द्वारा परस्पर चर्चा या विचार करके जो भी सर्वसंमत निर्णय होगा, उसमें हमारी सम्मति है किन्तु आराधना में बारह पर्वतिथि की क्षय-वृद्धि करने की प्रणालिका को चर्चा का विषय नहीं बनाना चाहिये, यही हमारी मान्यता निश्चित ही है । वह अपने पूज्य वडीलों ने जिस प्रकार आचरणा की है, उसको अक्षुण्ण रखना चाहिये । और इसमें ही शास्त्रानुसारित्व, परंपरानुसारित्व और गुर्वाज्ञानुसारित्व पूर्णतः रहता है ऐसी हमारी मान्यता है ।

विजयनन्दनसूरि

W

वि. सं. 2004 में सुरेन्द्रनगर में मुनि श्रीदर्शनविजयजी त्रिपुटी की ओर से आये हुये पत्र के उत्तर की नकल, जो पत्र उसी समय " शासन सुधाकर " नामक मासिक में आगे पीछे के नाम बिना "एक संत पुरुष का भेदी पत्र" शीर्षक से प्रकाशित हुआ था और " वीर शासन " नामक मासिक में नाम-स्थान सहित शब्दशः प्रकाशित हुआ था ।

वढवाण केम्प
जेठ वद-6, रविवार

वढवाण केम्प से **विजयनन्दनसूरि,**

तत्र मुनिश्री दर्शनविजयजी, मुनिश्री ज्ञानविजयजी, मुनिश्री न्यायविजयजी योग्य अनुवंदना

जेठ वद-3, गुरुवार का श्रावक गीरधरभाई के साथ भेजा हुआ पत्र मिला । संवत्सरी के बारे में तुमने कुछ स्पष्टीकरण पूछाये हैं किन्तु आप को मालुम है कि इस प्रकार के प्रश्नों के उत्तर के लिये प्रत्यक्ष मिलकर स्पष्टीकरण प्राप्त करना उचित है । आज दिन तक आपने आपकी ओर से पंचांग प्रकाशित करवाये, उसके बारे में हमें कुछ भी पूछाया नहीं है या उसी समय कुछ भी स्पष्टीकरण मांगा नहीं है । उसके बाद आपने "जैन पर्वतिथि का इतिहास " किताब छपवायी उसी समय भी हमें कुछ बताया नहीं था । तो अब स्पष्टीकरण पूछाने का क्या मतलब?

विशेष ता. 7-6-1948, सोमवार के "मुंबई समाचार" में प्रकाशित लेख हमने या हमारे गुरुजी ने दिया नहीं है या छपवाया नहीं है । और किसने समाचारपत्र में दिया वो भी हमें मालुम नहीं हैं । हम प्रायः कभी भी समाचारपत्र में कुछ भी देते नहीं हैं या छपवाते नहीं हैं तथापि हमने वो दिया हैं या छपवाया हैं ऐसा कोई माने तो वह उसकी नासमझ है ।

वि. सं. 1952 में जोधपुरी चंडाशुचंडु पंचांग बनानेवाले पंडित श्रीधर शीवलाल को ही उसी वक्त पूछाने पर उन्हो ने लिखा था कि हमारा पंचांग ब्रह्मपक्षीय है, वह मारवाड में मान्य है, आप के प्रदेश में सौरपक्ष मान्य है तो उसी प्रकार से आप को छठ्ठ का क्षय करना । और इसके बारे में 1952, श्रावण सुद-15 का "जैन धर्म प्रकाश" पुस्तक-12, अंक - 5वाँ तथा 1952 अषाड वद-11

का “सयाजी विजय” पढ लेंगे तो विशेष स्पष्टता हो जायेगी । और आत्मारामजी महाराज का भी अपनी उपस्थिति में उसी प्रकार (6 के क्षय का) अभिप्राय था, वह भी आप को स्पष्ट हो जायेगा । ता. 18-5-1937 का “आत्मानंद प्रकाश” पु.34, अंक-12 में आ. श्री वल्लभसूरिजी भी लिखते हैं कि स्वर्गस्थ गुरुदेव की आज्ञानुसार 1952 में भाद्रपद शुक्ल-6 का ही क्षय किया गया था । तो यदि उसी वक्त आत्मारामजी महाराज ने आपने लिखा है उसी प्रकारभाद्रपद शुक्ल-5 के क्षय पर पंचमी का ही क्षय माना होता तो श्री वल्लभसूरिजी को अपने गुरुजी के विरुद्ध लिखने का कोई भी कारण हो ऐसा हम मानते नहीं हैं ।

वळी आप लिखते है कि आ. श्रीसिद्धिसूरिजी कहते हैं कि मैं भी पहले से ही पंचमी का क्षय मानता था और दूसरों ने भी पंचमी का क्षय करके चतुर्थी के दिन संवत्सरी की थी । वह भी तद्दन गलत है । इस प्रमाण 1989 के “वीरशासन” वर्ष 11 के अंक 41 और 44 में आचार्य श्रीदानसूरिजी के स्पष्टीकरण से स्पष्ट ह जायेगी क्योंकि इसमें भी आ. श्रीविजयसिद्धिसूरिजी तो क्या सकल श्री तपागच्छीय चतुर्विध संघ में से किसीने भी भाद्रपद शुक्ल-5 का क्षय माना नहीं था किन्तु अन्य पंचांग के आधार पर भा. शु-6 का ही क्षय माना था, यह बात स्पष्ट है ।

विशेष तुम लिखते हैं कि भाद्रपद शुक्ल-6 का क्षय करके भाद्रपद-4, मंगळवार की संवत्सरी करने से आ.श्रीविजयरामचंद्रसूरिजी के साथ संवत्सरी होगी। अतः वे और उनका पक्ष मान्यता सही है ऐसा भद्रिक लोग या भदैया श्रावक मानेंगे । आपकी यह मान्यता भी गलत हे क्योंकि उनकी और अपनी संवत्सरी एक ही दिन आने से हम एक हो सकते नहीं क्योंकि वे लोग पंचमी का क्षय करते हैं और हम छठ्ठ का क्षय करते हैं । यदि हम ऐसा विचारेंगे तो लोंकागच्छ आदि की संवत्सरी भी अपने साथ आने से क्या हम लोंकागच्छ के हो जायेंगे । अतः इस बात का डर रखने का कोई कारण नहीं है ।

वळी आपने लिखा कि आप इस विषय़ में अच्छी तरह विचार करके मुद्दासर समाधान दें और विस्तार से स्पष्टीकरण करेंगे । तो हमने अपने क्षयोपशम के अनुसार प्रायः प्रत्येक प्रश्न के बारेमें प्रथम से ही विचार कर रखा है। अणागए चउत्थीए पाठ की व्यवस्था तथा क्षये पूर्वा वचन की व्यवस्था भी हमारे ध्यान में है । प्रत्येक विषय में अपने क्षयोपशम के अनुसार विगतवार स्पष्टता है ही किन्तु पत्र में सभी प्रकार की चर्चा व स्पष्टता करनी मुताबिक नहीं है । बाकी आ. श्रीविजयानंदसूरिजी म. (श्री आत्मारामजी म.), पं. श्रीगंभीरविजयजी गणिजी, लवार की पोळ के उपाश्रयवाले पं. श्रीप्रतापविजयजी गणिजी आदि अपने सभी वडील शास्त्र व परंपरा के आधार पर चलनेवाले थे किन्तु अपनी कल्पना के आधार पर चलनेवाले नहीं थे । वे बहुश्रुत, भवभीरु, अनुभवी और श्रीवीतराग शासन के संपूर्ण प्रेमी थे । वे शास्त्र व परंपरा से विरुद्ध हो ऐसा कदापि करें ऐसा मानने का कोई कारण नहीं है ।

शास्त्रानुसारी, अविच्छिन्न, सुविहित परंपरा अनुसार सैकाओं से यही एक राजमार्ग, धोरीमार्ग चला आ रहा है । वि. सं. 1952 में आ.श्रीसागरानंदसूरिजी ने अलग संवत्सरी की । सं.1992-93 में आ. श्रीरामचंद्रसूरिजी, उनके गुरु और उनके अनुयायीओं ने अलग संवत्सरी की । उनके सिवा भारतवर्ष के सर्व साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविकासहित चतुर्विध संघइसी धोरीमार्ग पर ही चला है और हम भी शास्त्र व परंपरा के अनुसार इसी धोरीमार्ग पर चल रहे हैं, तथापि जब आ. श्रीसागरानंदसूरिजी सं. 1992 में संवत्सरी संबंधित सकल श्री संघ से अलग अपनी संवत्सरी की आचरणा की तथा आ.श्रीरामचंद्रसूरिजीने वि.सं. 1992-93 में संवत्सरी संबंधित अपनी अलग आचरणा की वह शास्त्र व श्रीविजयदेवसूरीय परंपरा के अनुसार सही है ऐसा हमारी समक्ष जाहिर व मौखिक शास्त्रार्थ से सिद्ध करेंगे तो हम भी अपनी परंपरा छोडने के लिये और मिच्छा मि दुक्कडं देने के लिये तैयार हैं । और इसमें हमारा कोई कदाग्रह नहीं है । तथा आपने लिखा कि भावि संघ की रक्षा व एकता के खातिर हमारी आपको नम्र विनंति है तो इसके बारेमें जानना कि संघ की रक्षा व एकता भा. शु-5 के क्षय में भा. शु-5 का ही क्षय मानने में या भा. शु.-5 के क्षय में भा. शु.-3 का क्षय़ करने में ही होगा ऐसा हम मानते

नहीं है किन्तु सं. 1952, 1961, 1989 की तरह सकल श्री संघ द्वारा आचरित धोरी मार्ग पर चलने में ही संघ की एकता होगी और वही उचित लगता है ।

तुमने तुम्हारी "जैन पर्वतिथि का इतिहास" नामक पुस्तिका के पृष्ठ 44 पर लिखा है कि सं. 1961 में श्री सागरजी महाराज ने भी कपडवंज में संघ की एकता के लिये संघ को अन्य पंचांग मान्य रखाया था तो इस वक्त भी सं. 1961 में कपडवंज की तरह अन्य पंचांग को मान्य करके छठ्ठ का क्षय करके सकल श्री संघ के साथ भा.शु.-4, मंगळवार को श्री संवत्सरी करना ही हमें उचित लगता है । और तो ही संघ की एकता की सच्ची भावना कही जायगी । आपको भी ऐसी ही प्रेरणा करना ही उचित है ।

श्रीकल्पसूत्र, श्रीनिशीथसूत्र, चूर्णि तथा युगप्रधान श्रीकालिकाचार्य भगवान की आचरणा आदि अनेक प्रमाण-साबिती के आधार पर तथा त्रिकालाबाधित जैन शास्त्रानुसारी तपागच्छीय श्रीविजयदेवसूरीय पंरपरा अनुसार तथा श्रीधर शीवलाल जोधपुरी चंडाशुचंडु पंचाग के आधार पर, और 1952, 1961, 1989 में अहमदाबाद के डहेळा के उपाश्रय, लवार की पोळ के उपाश्रय, वीर के उपाश्रय, विमळ के उपाश्रय आदि सर्व उपाश्रयवाले और हिन्दुस्तान के सकल श्री तपागच्छीय संघ के सभी आचार्य, साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका चतुर्विध संघ द्वारा आचरित आचरणा के अनुसार इस वर्ष सं. 2004 की साल में भी संवत्सरी महापर्व भाद्रपद शुक्ल-4, मंगळवार, ता. 7-9-1948 को ही आराधना करनी हमें उचित लगता है । आपको भी इस प्रकार संवत्सरी पर्व की आराधना करनी चाहिये और ऐसा हमें उचित व हितकर लगता है । बाकी जैसी आपकी इच्छा ।

सं. 1952 की श्रीसंघ की आचरणा सेआज तक कोई गरबडी पैदा नहीं हुयी है, वैसे भविष्य में भी गरबडी होगी ऐसा हम मानते ही नहीं हैं ।

मुनि श्री दर्शनविजयजी का स्वास्थ्य अब सुचारु होगा ।

U

सं 1998 में तळाजा आये श्रीबदामी साहिब आदि और सं. 1999 में बोटाद आये शेठ श्रीकस्तुरभाई ने दिया हुयाप्रारूप अर्थात् ड्राफ्ट---

वि. सं. 1998 में शेठ श्रीकस्तुरभाई ने श्रीसुरचंद पुरुषोत्तमदास बदामी जज साहिब, शेठ भगुभाई चुनीलाल सुतरीया, शेठ चमनभाई लालभाई, शेठ जीवतलाल प्रतापशी, शेठ पोपटलाल धारशीभाई इन पांचो गृहस्थ को अहमदाबाद से तिथि के शास्त्रार्थ के बार में निम्नोक्त ड्राफ्ट लेकर तळाजा नगरे परम पूज्य शासनसम्राट गुरु भगवंत श्रीनेमिसूरीश्वरजी महाराज के पास भेजे थे ।इस ड्राफ्ट में आ. श्रीसागरानंदसूरीश्वरजी म. और आ. श्रीरामचंद्रसूरीश्वरजी म. के हस्ताक्षर थे ।और इसके बारे में सूचन व संमति लेने के लिये आये थे ।

उन्हों ने संमति व सूचन देने को कहा, उसके प्रत्युत्तर में हमने बताया कि जाहिर व मौखिक पद्धति से आ. श्रीरामचंद्रसूरिजी के साथ शास्त्रार्थ करना हो तो इसमें अपनी संमति है ।

बदामी साहब ने कहा साहिब इस ड्राफ्ट में जाहिर व मौखिक शास्त्रार्थ की ही बात है । यह सुनकर हमने वही ड्राफ्ट मांगा, उन्हों ने दिया और हमने पढा । वही ड्राफ्ट निम्नोक्त प्रकार का था -----

पालिताणा, ता. 19-4-1942,
वैशाख शुद-4, रविवार

श्री सकळ संघ की तिथि चर्चा संबंधित मतभेद की शान्ति के लिये निर्णय करने के लिये शेठ कस्तूरभाई लालभाई जिन तीन आदमी के नाम का प्रस्ताव लाये उनमें से हम दोनों को (आचार्य श्रीसागरानंदसूरि तथा आ. श्रीरामचंद्रसूरिजी को) दो दो नाम पसंद करना । उसमें जो नाम पर दोनो की संमति हो उसको न्यायाधीश के रूप में नियुक्त करके, वह दोनों पक्ष के मंतव्य सुनकर जो निर्णय दे वह हम दोनों को कबूल करना और इनके अनुसार आचरण करने का हम दोनों और दोनों के शिष्य समुदाय को मंजूर होगा ।

विजयरामचंद्रसूरि दा. पोते. आनंदसागर दा. पोते.

इस ड्राफ्ट को पढकर हमने कहा कि इसमें हस्ताक्षर करनेवाले दोनों आचार्य अपना मंतव्य बिना जाहिर व मौखिक शास्त्रार्थ न्यायाधीश को समझा सकते हैं । इसमें जाहिर व मौखिक शास्त्रार्थ शब्द है ही नहीं ।

यह सुनकर बदामीसाहिब ने कबूल किया कि महाराज साहिब की बात सही है । बाद में उन्हों ने पूछा कि तो जाहिर व मौखिक शास्त्रार्थ कैसे किया जाय हमने कहा कि जाहिर व मौखिक शास्त्रार्थतीन में से किसी एक प्रकार हो सकता है । 1. राजसभा में रखना हो तो भी हो सकता है, एक ओर भावनगर स्टेट है, दूसरी ओर पालीताणा स्टेट है और तीसरा वलभीपुर स्टेट है । जहाँ पर करना हो वहाँ हम तैयार है ।

यह सुनकर बदामी साहिब ने कहा कि ऐसा होना अभी तो संभव नहीं है।

2. तो दयाळु दादा की पवित्र छाया में पालीताणा में हिन्दुस्तान का सकळ संघ सम्मिलित करें और वहाँ चतुर्विध संघ की उपस्थिति में जाहिर व मौखिक शास्त्रार्थ किया जाय । हमने जाहिर व मौखिक शास्त्रार्थ की दूसरी रीत बतायी ।

बदामी साहिब ने कहा ऐसा करने में बहुत तुफान होने की संभावना है ।

इसके प्रत्युत्तर में हमने कहा कि इसमें तुफान कैसे हो सकता है दो आचार्य शास्त्रार्थ करें और बाकी सकळ संघ शांति से सुने । और अपने अपने पक्षवाले को शांति रखने की अपील करें ।यदि इस प्रकार शास्त्रार्थ न करना हो तो

3. यहाँ आये हुये तुम पांच और छठ्ठे शेठ श्रीकस्तूरभाई इन छः की उपस्थिति में जाहिर व मौखिक शास्त्रार्थ किया जाय और न्यायाधीश उसका उसी समय निर्णय जाहिर करें । जो दोनों को कबूल होवे । इतना तो होना ही चाहिये ।

तुरत शेठ जीवाभाई ने कहा कि आपका जो विचार हो वह आप लिखकर दें । अतः हमने जीवाभाई की उपस्थिति में ही ड्राफ्ट तैयार किया और इसका वांचन करके उन लोगों को दिया । वह ड्राफ्ट इस प्रकार था ----

ता. 3-5-1942

विक्रम संवत् 1992 के वर्ष में शनिवार की संवत्सरी तथा वि. सं. 1993 के वर्ष में बुधवार की संवत्सरी विजयरामचंद्रसूरिजी ने तथा उनके गुरुजी ने और उनके समुदाय ने जो की थी, वह शास्त्र व श्रीविजयदेवसूरीश्वरजी महाराज की परंपरा से विरुद्ध है । अतः उस विषय में सर्वप्रथम मौखिक और जाहिर शास्त्रार्थ विजय रामचंद्रसूरिजी को हमारे साथ करना पडेगा । उन्हों ने तपागच्छ के सर्व आचार्यों को बिना पूछे संवत्सरी अलग की होने से सर्वप्रथम प्रश्न हम उनको पूछेंगे, जिनका उत्तर उनको मौखिक ही देना पडेगा । बाद में इस विषय में वे भी हमसे प्रश्न पूछेंगे । बाद में तिथि संबंध में भी इस प्रकार शास्त्रार्थ किया जायेगा । और उसी समय न्यायाधीश जो फैसला सुनायेगा, वह हम दोनों को मान्य करना पडेगा। यद्यपि न्यायाधीश के रूप में दोनों पक्ष को संमत व्यक्ति नियुक्त होना चाहिये ऐसा हम मानतें हैं किन्तु ठराव के अनुसार मध्यस्थ के रूप में आप जो नियुक्त करेंगे उसमें हमारा विरोध अनुपयुक्त होने से हम विरोध करते नहीं है ।

मध्यस्थ अर्थात् न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किये गये विद्वान हमारे शास्त्रार्थ के विषय को समझने में समर्थ है कि नहीं और प्रामाणिक है कि नहीं, इस बात की परीक्षा हमें करनी होगी ।

शास्त्रार्थ के समय दोनों पक्ष में से जिनको भी उपस्थित रहना हो वे भागले सकते हैं ।

यही ड्राफ्ट लेकर पांचो ही श्रावक रवाना हुये ।

यही ड्राफ्ट वि. सं. 1999 में बोटाद में परम पूज्य शासनसम्राट परमगुरु भगवंत श्री के पास उनकी संमति व सूचन लेने के लिये आये हुये शेठ श्रीकस्तूरभाई लालभाई तथा शेठ श्रीचमनलाल लालभाई को भी दिया था । शुरु में शेठ श्रीकस्तूरभाई ने बताया कि इस प्रकार ड्राफ्ट करके दोनों आचार्यों के हस्ताक्षर लिये हैं और इस प्रकार शास्त्रार्थ रखा गया है, तो इस विषय में आपकी क्या राय व सूचन है ?

प्रत्युत्तर में हमने कहा कि1. सर्वप्रथम संघ में ऐसी अलग प्रवृत्ति क्यों हो ही सकती है? चाहे मैं हूँ या अन्य हो । यदि कोई संघ से अलग प्रवृत्ति करें तो संघ के अग्रणी को उनके पास उसकी स्पष्टता मांगना चाहिये । यही अपनी दुर्बलता है।

2. तुम लोग अपनी संमति-सूचन लेने आये हो तो क्या हस्ताक्षर करनेवाले दोनों आचार्यों को पूछकर आये हो ? या अपने आप ही ।

प्रत्युत्तर में शेठ ने बताया कि मैं अपने आप ही आया हूँ ।

यह सुनकर हमने कहा कि तो हमारी संमति या सूचन का क्या उपयोग कल वे दोनों आचार्य में से कोई ऐसा कहेंगे कि हमें उनकी संमति या सूचन की कोई आवश्यकता नहीं है, तो हमारे सूचन का क्या मतलब? तथापि यदि आप को हमारे सूचन की जरूरत हो तो आपका यह जो ड्राफ्ट है उसकी जगह फिरसे नया ड्राफ्ट बनाकर, उसमें दोनों पक्ष के चार चार आचार्य की संमति लेना लिखना । पहले ड्राफ्ट में दोनों आचार्यों के हस्ताक्षर लेकर, बाद में चार इस पक्ष के आचार्यों के और चार उसी पक्ष के आचार्यों के हस्ताक्षर लेने चाहिये ।

3. कहीं भी शास्त्रार्थ लिखित हो ही नहीं सकता । जाहिर और मौखिक शास्त्रार्थ ही शास्त्रार्थ कहलाता है । महान् कवि व विद्वान् पंडित श्रीहर्ष ने "खंडन खंडखाद्य" में बताया है कि "कथायामेव निग्रहः" । वादी और प्रतिवादी के लेखन में निग्रह नहीं कहा है ।

4. हम शास्त्रार्थ करने के लिये तैयार है, किन्तु जाहिर व मौखिक शास्त्रार्थ करना हो तो अपनी संमति है । भले ही अपने सामने बारह रामचंद्रसूरि आयें या बारह सो (1200) कल्याणविजय आयें । किन्तु जाहिर व मौखिक रीति से हो तो हम खुशी से तैयार हैं ।

और उसमें जो सत्य सिद्ध होगा उसका स्वीकार करने को भी तैयार हैं । हमारा किसी भी प्रकार का आग्रह मत समझना । बाकी लिखित में तो कोई पक्ष की ओर से 500 देंगे तो किसी पक्ष की ओर से 1000 देंगे । कोई 2000 भी दे सकते हैं ।

शेठ ने कहा कि इसमें ऐसा नहीं होगा ।

हमने कहा नहीं होगा तो कल्याणकारी, किन्तु जाहिर व मौखिक शास्त्रार्थ हो तो ही उसमें अपनी संमति है ।

बाद में शेठ ने कहा कि अब आप को दूसरा कुछ भी न कहना हो तो हम जाते हैं । उसका प्रत्युत्तर देते हुये हमने कहा कि तुम लोग कुरान व तलवार लेकर आये थे ऐसा मत समझना । अपने ड्राफ्ट में आप संमति दो अन्यथा सर्व दोष आप के शिर पर है ऐसा मत समझना ।

हम अपने स्वभाव के अनुसार जोर से चिल्लाकर बोलते हैं किन्तु किसी भी प्रकार का अनुचित हम नहीं बोलते हैं ।

बाद में शेठ खडे हुये और वंदन करके अनुज्ञा मांगी । ठीक उसी वक्त हमने अपना लिखा हुआ ड्राफ्ट शेठ को दिया और कहा कि लीजिए यही हमारा उत्तर है ।

ड्राफ्ट लेकर सीढी नीचे उतरते उतरते शेठ बोले कि मुझे उचित लगेगा तो मैं यह ड्राफ्ट दूँगा ।

अतः हमने शेठ को बोला आपने जिस कार्य के लिये अपनी संमति या सूचन लेने के लिये आये थे यदि उसकी आवश्यकता हो तो देना । अन्यथा जैसी आपकी इच्छा ।

विजयनन्दनसूरि

N. B. बोटाद में शेठ श्रीकस्तूरभाई के साथ उपर्युक्त जो बात हुयी थी वही बात शब्दशः हमने आ. श्रीविजयरामचंद्रसूरिजी को वि. सं. 1999 में श्रीगिरिराज उपर जब हमें मिले तब कही थी ।

सूचना

(वि. सं. 2027 के दिवार पंचांग से)

शास्त्राज्ञा व सुविहित परंपरा के अनुसार श्री जैन श्वेताम्बर मूर्तिपूजक तपागच्छीय श्री संघ को वि. सं. 2028 में अगले वर्ष में श्री संवत्सरी महापर्व की आराधना भाद्रपद शुक्ल दूसरी चतुर्थी, मंगळवार, ता. 12-9-1972 के दिन करनी है ।**विजयनन्दनसूरि**

(वि. सं. 2028 के दिवार पंचांग से)

तपागच्छ की प्ररूपणा की प्राचीन मर्यादा, अहमदाबाद, डहेळा के उपाश्रय की होने से डहेळा के उपाश्रय की और लवार के उपाश्रय की प्रणालिकी अनुसार संवत्सरी, तिथि तथा पंचांग-मान्यता की आचरणा हम सब और तपागच्छ श्री चतुर्विध संघ करते आ रहे हैं और भविष्य में भी डहेळा के उपाश्रय व लवार के उपाश्रय में संवत्सरी, तिथि, और पंचांग-मान्यता की जो प्रणालिका अपनायेंगे वही प्रणालिका का आचरण हम भी करेंगे ।

विजयनन्दनसूरि